जैव विविधता विनाश और भोजन का संकट

प्रमोद भार्गव

वे दिन अभी स्मृति से लुप्त नहीं हुए हैं, जब गांवों में पहली बारिश के साथ ही बिना किसी मानवीय उपक्रम के खेतों की बागड़ और घरों की दीवारें व छतें आहारदायी वनस्पतियों से लद जाया करती थीं। बहुत ज़रूरी हुआ तो कोठे की किसी मियार से लटकी पोटली में संभालकर रखे बीज दीवार के सहारे गीली मिट्टी में दबा दिए। फिर उनके अंकुरण से लेकर फलन तक का काम कुदरत के करिश्मे पर छोड़ निश्चिंत हो लिए। प्राकृतिक रूप से ही बरसाती नालों और पोखरों में विविध जीव-जंतुओं की लीला देखते ही बनती थी।

वन प्रांतरों में उपलब्ध जैव-विविधता के इन्द्रधनुषी रंगों का तो कहना ही क्या? देखते-ही-देखते आहारदायी वनस्पतियों और जंतुओं की उपलब्धता प्रकृति पर निर्भर एक बड़ी आबादी की क्षुधापूर्ति का साधन बन जाया करती थी। लेकिन पाश्चात्य मूल्यों की तर्ज़ पर आधुनिकीकरण और आर्थिक विकास की दर बढ़ाने की दृष्टि से उद्योगों और बिजली घरों को अनियंत्रित प्रोत्साहन दिए जाने का जो सिलसिला शुरू हुआ उसने सारे पारिस्थितिकी तंत्र को तो गड़बड़ाया ही, आम भारतीय को उपभोग की संस्कृति का भी आदी बना दिया। नतीजतन प्रकृति का बेरहमी से दोहन हुआ, मिट्टी में नमी कम हुई और बरसात में प्राकृतिक रूप से उत्पन्न हो जाने वाली जैव विविधता विलुप्त होने लगी। कृषि उपज बढ़ाने के लिए कीटनाशकों और संकर बीजों के इस्तेमाल ने जैव विविधता को नष्ट करने में बढ़-चढ़कर योगदान दिया। धीरे-धीरे जैव विविधता नष्ट हुई और जलवायु संकट भी बढ़ा। देखते-देखते करोड़ों लोगों के अस्तित्व पर खतरे के बादल मंडराने लगे।

आधुनिक जीवन शैली में हमारी लिप्साएं इतनी बढ़ गई हैं कि हमने जैव विविधता का विनाश कर पर्यावरणीय संतुलन को लड़खड़ा दिया है। अब जलवायु संकट भी हम झेल रहे हैं।

प्रगति की नाप हमने आम नागरिक की खुशहाली की बजाय शेयर बाजार में उछाल और भौतिक संसाधनों की उपलब्धियों से की। इनका वजूद कायम रहे, इसके लिए हमने संविधान में संशोधन कर कानून भी शिथिल किए। नतीजतन नदियां, तालाब, वन, वन्य जीव, समुद्र तट, उपजाऊ भूमि सब कथित विकास की भेंट चढ़ते हुए अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं। ये संशोधन राजनेताओं, नौकरशाहों और औद्योगिक समूहों के गठजोड़ ने सिर्फ इसलिए करवाए ताकि प्राकृतिक संपदा का दोहन निर्बाध चलता रहे। भूमंडलीकरण के दौर में इस दोहन की गति और बढ़ गई है और प्राकृतिक संपदा कुछ निजी हाथों की संपत्ति में तब्दील होती चली जा रही है।

जैव विविधता के लिए ज़रूरी पांच तत्वों में से सबसे ज़्यादा हानि जल और ज़मीन की हुई है। औद्योगिक इकाइयों ने जल का इस हद तक दोहन किया कि जल संकट तो बढ़ा ही मिट्टी की नमी भी जाती रही। नमी की कमी से जैव विविधता की जड़ें भी मुरझाती चली गईं। उद्योगों के कारण शहरीकरण बढ़ा और शहरीकरण के विस्तार से कृषि भूमि घटी। इस विस्तार ने भी जैव विविधता को रौंदा। नतीजतन भारत में उपलब्ध 33 प्रतिशत वनस्पतियां तथा 62 प्रतिशत जीव-जंतुओं का अस्तित्व संकट में है। यदि विकास की यही गति रही तो 2050 तक विश्व की एक चौथाई प्रजातियां लुप्त हो जाएंगी और मानव के लिए भूख का संकट और गहरा जाएगा।

कीटनाशक भी जैव विविधता के विनाश के कारण बने। यदि विश्व स्वास्थ्य संगठन की मानें तो करीब बीस हज़ार लोग प्रति वर्ष विषैले कीटनाशकों के कारण ही मारे जाते हैं। जब मनुष्य के प्राणों की चिंता नहीं तो जैव विविधता की चिंता कौन करे?

हालांकि नए प्रयोगों ने अब यह साबित कर दिया है कि फसल की सुरक्षा के लिए रासायनिक कीटनाशक ज़रूरी नहीं हैं। लेकिन ये नतीजे तब सामने आए जब आंध्रप्रदेश के ग्राम पुनुकुल और बांग्लादेश के किसानों ने कीटनाशकों का उपयोग किए बिना उपज अच्छी गुणवत्ता व मात्रा में पैदा कर कृषि वैज्ञानिकों को चुनौती दे डाली। लेकिन इस बीच लाखों टन कीटनाशकों का इस्तेमाल खेतों में किया गया, उसने लाखों एकड़ कृषि भूमि और असंख्य जल स्रोतों को प्रदूषित तो किया ही, वनस्पति एवं जीव-जंतुओं की सैकड़ों प्रजातियों को भी नष्ट कर दिया और सैकड़ों को विलुप्ति की कगार पर पहुंचा दिया। गोरैया, कौवे, गिद्ध, सांप, केंचुए, मेंढक आदि प्रजातियां खेतों में छिड़के कीटनाशकों के कारण ही विलुप्तता की कगार पर हैं।

स्वास्थ्य वर्धन के लिए दुनिया में बढ़ते आयुर्वेद दवाओं के उपयोग ने जड़ी-बूटियों से सम्बंधित जैव विविधता का विनाश किया है। विश्व भर में चिकित्सा विज्ञानी एड्स, कैंसर, हृदयरोग, रक्तचाप, मधुमेह, कैंसर आदि रोगों की स्थायी चिकित्सा भारतीय जड़ी-बूटियों में ढूंढ रहे हैं। इस कारण अरबों डॉलर की जड़ी-बूटियों का निर्यात भारत से युरोपीय देशों में किया जा रहा है। जड़ी-बूटियों के निर्यात में कोई बाधा न आए इस नज़रिए से केंद्र सरकार ने वनवासियों के संरक्षण से जुड़े कानूनों के क्रियान्वयन को जटिल बना दिया है। ऐसा सिर्फ इसलिए किया गया है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियां धड़ल्ले से वन संपदा का नकदीकरण कर सकें।

इन जड़ी-बूटियों का वनवासी आहार व उपचार में भी इस्तेमाल करते हैं, जिससे अब वे वंचित हैं। लेकिन जिस निर्ममता से जड़ी-बूटियों का दोहन किया जा रहा है उसके चलते कितनी जड़ी-बूटियों का अस्तित्व बचा रह पाएगा।

सौंदर्य प्रसाधन में वनस्पतियों की बढ़ती मांग जैव विविधता के लिए खतरा बनी हुई है। भारतीय फूल प्रसाधन सामग्री के निर्माण के लिए गुणवत्ता की दृष्टि से श्रेष्ठ माने जाते हैं। यही कारण है कि अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इनकी मांग लगातार बढ़ रही है। इसी कारण फूलों की खेती फिलहाल लाभ का सौदा बनी हुई है। लेकिन असीमित दोहन से प्राकृतिक रूप से उत्पन्न होने वाली पुष्प बल्लरियां नष्ट हो रही हैं। इन फूलों की कई किस्मों का उपयोग वनवासी भोज्य पदार्थ के रूप में करते चले आ रहे हैं, जिससे अब उन्हें नए कानूनी प्रावधानों के मार्फत वंचित किया जा रहा है।

नष्ट होती जैव विविधता से बेतरह प्रभावित होने वाले वे छोटे सीमांत किसान और वनवासी हैं जिनके लिए भूमि के टुकड़े, जल स्रोत और वन्य प्रदेश प्राकृतिक धरोहर थे। लेकिन कृषि क्षेत्र में आधुनिकीकरण, औद्योगिक विकास और शहरीकरण ने पारिस्थितिकी तंत्र के ढांचे को ध्वस्त कर दिया जिसके फलस्वरूप जैव विविधता के क्षरण का सिलसिला शुरू हुआ।

भूमंडलीकरण की शुरुआत के समय यह आशा की गई थी कि वस्तुओं की गुणवत्ता और प्राकृतिक संपदा के सरंक्षण पर सरकारी नियंत्रण मज़बूत होगा, लेकिन बहुराष्ट्रीय कंपनियों और देशी माफियाओं के समक्ष जैसे पूरे सरकारी तंत्र ने घुटने टेक दिए हैं। जबकि सरकारी तंत्र को ध्यान रखना चाहिए कि जैव विविधता का कोई विकल्प नहीं है। जैव विविधता के विनाश ने भी गरीब को भोजन से वंचित किया हुआ है। इस बात को बहुत कम पहचाना गया है। ***(स्रोत फीचर्स)***

स्रोत सजिल्द

स्रोत के पिछले अंक

एक वर्ष सजिल्द रुपए 200.00। डाक खर्च रुपए 25.00 अतिरिक्त ।